**International Journal of Research in Hindi**
**www.hindijournal.in**
**ISSN: 2582-3493**
**Received: 13-02-2026, Accepted: 16-03-2026, Published: 31-03-2026**
**Volume 8, Issue 1, 2026, Page No. 38-40**

# जैनेन्द्र के साहित्य में नारी चिंतन का शाश्वत मूल्य: एक मनोवैज्ञानिक एवं दार्शनिक विश्लेषण

**Babita Devi, Dr. Anand Kumar Rai**
Research Scholar, Department of Hindi, Jayoti Vidhypeeth Women's Universtiy, Jaipur, Rajasthan, India

**सारांश**
नारी को व्यक्तित्व प्रदान करने के लिए जैनेन्द्र ने उसके स्वरूप को राजनीति, समाज, परिवार आदि से भिन्न–भिन्न रूपों में भिन्न–भिन्न दृष्टिकोणों से देखा है। उनमें भारतीय संस्कृति और मर्यादा की चेतना नहीं है, किन्तु सत्य यह है कि जैनेन्द्र के पात्र अतीत को स्पर्श करते हुए भी वर्तमान में जीते हैं। वे अपनी संस्कृति की कभी उपेक्षा नहीं करते। भौतिकवाद के युग में नारी पुरुष से आगे बढ़ने को तत्पर है। नारी पुरुषों से प्रतिस्पर्धा करती है, किन्तु जैनेन्द्र के अनुसार नारी पुरुषों से प्रतिस्पर्धा करती है। प्रतिस्पर्धा उचित नहीं है। 'त्यागपत्र', 'परख' आदि में व्यक्त जीवन आदर्श, सामाजिक मर्यादा के पोषक मूल्य हैं। हिन्दी उपन्यासों में मनोविश्लेषणात्मक परम्परा के प्रवर्तक जैनेन्द्र कुमार का स्थान प्रेमचंद के बाद के उपन्यासकारों में अत्यंत महत्वपूर्ण है। जैनेन्द्र का कथा साहित्य भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों का संवाहक रहा है। उन्होंने भारतीय मन को उसकी संस्कृति और परम्परा के परिप्रेक्ष्य में पहचाना है। उन्होंने अपने उपन्यासों और कहानियों में कई महत्वपूर्ण प्रश्न उठाए हैं जैसे– ईश्वर, आस्तिकता, नास्तिकता, बुद्धि–भावना, अंतर्जगत–तर्क, हिंसा–अहिंसा, प्रेम और वासना, पति और पत्नी, सतीत्व, शरीर की पवित्रता, पाप–पुण्य, समर्पण इत्यादि।

**मूल शब्दः** जैनेन्द्र कुमार, स्त्री, प्रेम, मनोविज्ञान, उपन्यास, कुंठा

जैनेन्द्र कुमार 20वीं सदी के एक प्रभावशाली हिंदी लेखक थे। उनका जन्म 1905 में उत्तर प्रदेश के अलीगढ़ के एक छोटे से गाँव कौरियागंज में हुआ था। चूँकि उनके पिता का निधन मात्र दो वर्ष की आयु में हो गया था, इसलिए उनका पालन–पोषण मुख्यतः उनकी माँ और उनके भाई ने किया। उन्होंने काशी विश्वविद्यालय से उच्च शिक्षा प्राप्त की और फिर 1921 में असहयोग आंदोलन में शामिल हो गए। स्कूल के दिनों से ही उनका लेखन में रुझान था। दूसरे शब्दों में, वे एक लेखक बनना चाहते थे।

उनका पहला कहानी संग्रह 'फाँसी' था। इसके बाद, युवा जैनेन्द्र ने कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा और प्रेमचंद के बाद हिंदी साहित्य के सबसे प्रतिष्ठित लेखकों में से एक बन गए। उन्होंने हिंदी साहित्य की कहानी कहने की शैलियों को नई दिशाएँ दीं। वे एक अन्य प्रसिद्ध हिंदी लेखक मुंशी प्रेमचंद के निकट सहयोगी माने जाते थे। लेकिन जैनेन्द्र की रचनाओं में प्रेमचंद का प्रभाव कभी नहीं दिखाई दिया। वे अपनी अनूठी कहानी कहने की शैली के लिए जाने जाते थे। उनकी रचनाएँ इस अर्थ में अपूर्ण थीं कि उनमें पाठकों को आगे के कथानक का अनुमान लगाने के लिए अँधेरे क्षेत्र में उतरने का पर्याप्त अवसर मिलता था। पाठकों को सब कुछ नहीं परोसा जाता था। वे अपने पाठकों को सब कुछ सुनाने के बजाय प्रतीकों का प्रयोग करना पसंद करते थे। उन्होंने 'सुनीता' और 'त्यागपत्र' जैसे उपन्यासों में मानव मानस की पड़ताल की। अपनी रचनाओं में उन्होंने मानवीय संबंधों में निहित तनावों की पड़ताल की और मानवीय प्रेरक मूल्यों, मानस और नैतिकता के प्रति गहरी समझ और सहानुभूति प्रदर्शित की। उनके पात्र अपनी सूक्ष्म भाषा में ही बहुत कुछ कह जाते हैं। उनके काल में जैनेंद्र कुमार, भगवती चरण वर्मा और अज्ञेय हिंदी के प्रमुख व्यक्तित्ववादी लेखकों में गिने जाते थे। यही कारण है कि कुमार की रचनाएँ स्पष्ट रूप से मनोवैज्ञानिक दर्शन और आत्मकथात्मक तत्वों से ओतप्रोत थीं। यह सर्वमान्य है कि जैनेंद्र कुमार ही हिंदी में मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के जन्मदाता थे।

जैनेन्द्र की प्रारंभिक तीन कृतियों परख (1929), त्यागपत्र (1937) और सुनीता (1935) के केंद्र में स्त्री हैं। अधिकतर प्रेम करने वाली स्त्रियाँ। प्रेम में डूबी ये स्त्रियाँ विचारशील और परिश्रमी होती हैं। अपने पारिवारिक और सामाजिक दायित्वों का निर्वहन करते हुए, यही वे स्त्रियाँ हैं जिन्होंने पारिवारिक मर्यादा, परंपरा, नियमों के पाखंडी चित्र को तोड़ा और पारंपरिक स्त्री देह से बाहर निकलकर जीत, हार और संघर्ष का अनुभव किया। 'त्यागपत्र' में जैनेन्द्र की साहित्यिक चेतना अपने चरमोत्कर्ष पर है। मृणाल के चरित्र, संघर्ष और त्रासदी ने उनके व्यक्तित्व को अद्भुत ऊँचाई प्रदान की है। 'त्यागपत्र' में आधुनिक हिंदी गद्य साहित्य का सशक्त स्त्री विमर्श केवल स्त्रियाँ ही कर सकती हैं, यदि ऐसी कोई विवशता न हो, तो प्रेमचंद और जैनेन्द्र की कुछ रचनाएँ आधुनिक स्त्री विमर्श के समकक्ष खड़ी होती हैं। इन स्त्रियों ने अपने कर्तव्यों का पालन करते हुए जिस प्रकार नैतिकता और मर्यादा का विश्लेषण किया, जिस प्रकार सामाजिक ढाँचे में व्याप्त पाखंड को तोड़ा, वह भविष्य की सशक्त स्त्रियों का मार्ग प्रशस्त करता है। जैनेन्द्र की इन महिलाओं ने स्वेच्छा से अपना जीवन नहीं चुना है।

जैसा कि हम पहले पढ़ चुके हैं, जिस समय जैनेंद्र ने लिखना शुरू किया, लोग प्रेमचंद और उनकी साहित्यिक कृतियों से प्रभावित थे। प्रेमचंद की रचनाएँ समाज और उसमें छिपी बुराइयों पर केंद्रित थीं। दूसरी ओर, जैनेंद्र की रचनाएँ व्यक्ति के मानस और उसके स्वभाव तथा उसके परिवेश पर केंद्रित थीं। जैनेंद्र की महिला पात्रों की आलोचना की गई है क्योंकि उन्हें उनके लेखक द्वारा पर्याप्त स्वतंत्रता दी गई थी। लेकिन इसने जैनेंद्र को कभी भी पीछे हटने और पहले बताई गई बातों को बदलने से नहीं रोका। मानव स्वभाव में सामाजिक जटिलताएँ और उसकी अपनी मानसिक प्रकृति शामिल होती है। इन दोनों का सह–अस्तित्व है और इन्हें एक–दूसरे से स्वतंत्र नहीं देखा जा सकता। इस दृष्टिकोण से, जैनेंद्र कुमार की साहित्यिक रचनाएँ प्रेमचंद की साहित्यिक कृतियों को पूर्ण करती हैं। प्रेमचंद की साहित्यिक रचनाओं में एक शून्यता का भाव रहा है जिसे जैनेंद्र कुमार ने भरा है।

जैनेंद्र कुमार के सर्वश्रेष्ठ उपन्यासों में सुनीता, त्यागपत्र और कल्याणी शामिल हैं। इन रचनाओं ने पाठकों को लेखक द्वारा स्थापित एक नया दृष्टिकोण प्रदान किया। इन रचनाओं ने वयस्क पाठकों को चिंतन का एक नया मार्ग दिखाया। उनके

अन्य महत्वपूर्ण और प्रसिद्ध उपन्यासों में जयवर्धन और पारख का नाम उल्लेखनीय है। आइए, उनके तीन प्रसिद्ध उपन्यासों पर नज़र डालें।

### जैनेन्द्र कुमार के उपन्यास

**सुनीता की कहानी संक्षिप्त है:** श्रीकांत अपनी पत्नी सुनीता के साथ रहता है। सुनीता प्रतिभाशाली और सुंदर है। एक दिन श्रीकांत अपने क्रांतिकारी मित्र हरिप्रसन्न को घर लाता है। श्रीकांत अपनी पत्नी से हरिप्रसन्न को प्रसन्न करने के लिए कहता है। उस दिन सुनीता को हरिप्रसन्न पर ध्यान केंद्रित करने के लिए कहकर श्रीकांत बाहर चला जाता है। अपनी किसी भी रुचि के बिना सुनीता उसके करीब आती है। हरिप्रसन्न उससे भोग करना चाहता है। जब सुनीता एक के बाद एक अपने कपड़े उतारकर नग्न हो जाती है, तो हरिप्रसन्न अलग हो जाता है और खड़ा हो जाता है। बाद में उसे किसी भी तरह घर पर छोड़कर चला जाता है। उपन्यास में हरिप्रसन्न के अवसाद को दिखाया गया है। हरिप्रसन्न एक क्रांतिकारी है, लेकिन वह अंदर से बहुत उदास, कमजोर और टूटा हुआ है। उसके बाहरी और आंतरिक में बहुत अंतर है। लेखक उसके अचेतन मन में प्रवेश करता है और पाता है कि उसके अवसाद के लिए उपचार की आवश्यकता है

दूसरी ओर, जैनेंद्र ने मृणाल के भतीजे प्रमोद के दृष्टिकोण से कथा का ताना–बाना बुना है, जो अपनी चाची से गहरे प्रेम और लगाव रखता है। स्वतंत्रता और परिवार के विषय इस पुस्तक में गहराई से समाहित हैं। मनोवैज्ञानिक संवेदनशीलता के उपन्यास के रूप में भी प्रशंसित, द रेज़िग्नेशन उस समय के जीवन की एक अंतर्दृष्टि है और एक महिला के लिए है जो अपनी शर्तों पर जीवन जीने की कोशिश कर रही है।

**मुझे सबसे दिलचस्प बात यह लगी कि इस उपन्यास में जैनेंद्र ने अपनी संरचना में कई बदलाव किए हैं:** कथानक से लेकर कथावाचन तक, जो काफ़ी ताज़ा है। इसने मुझे टैगोर की किताबों की याद दिला दी और यह सही भी है, क्योंकि दोनों की रचनाओं में नारीवाद (तब मुझे यकीन है कि उस नाम से नहीं जाना जाता था) और व्यक्तिवाद के विषय स्पष्ट रूप से प्रतिबिम्बित होते हैं। उसके दुखों की सूचना पाकर उसका भतीजा जज प्रमोद उसे लेने आता है। लेकिन वह प्रमोद के साथ जाने से इनकार कर देती है और दुःखी जीवन स्वीकार कर लेती है। आम पाठक मृणाल के इस निर्णय का सहज समर्थन कर सकते हैं। ऐसा लगता है कि मृणाल ने स्वयं कष्टों का जीवन चुना है। वह चाहती तो परिस्थितियों से लड़ सकती थी। लेकिन लेखक को इसकी उम्मीद नहीं थी। उन्होंने मृणाल के चरित्र के माध्यम से अपना दृष्टिकोण और दर्शन प्रस्तुत किया है। दुख मृणाल की नियति नहीं थी क्योंकि अगर वह चाहती तो शायद इन परिस्थितियों से मुक्ति पा सकती थी। मृणाल के चरित्र को एक साहसी और सशक्त महिला चरित्र के रूप में प्रस्तुत करके उसे यादगार बनाने की भी संभावना थी। हालाँकि, मृणाल के माध्यम से लेखक सामाजिक विसंगतियों को उजागर करता है।

भारत आने पर डॉ. असरानी उस पर चरित्रहीन होने का आरोप लगाते हैं, लेकिन अंततः उससे विवाह कर लेते हैं। उनका वैवाहिक जीवन सफल नहीं रहा। कल्याणी रूढ़िवादी जीवन के बंधन को स्वीकार नहीं करता, लेकिन असरानी परंपरावादी और शंकालु है। वह कल्याणी को केवल धन कमाने का साधन मानता है। परिणामस्वरूप, कल्याणी को जीवन भर शारीरिक और मानसिक दोनों तरह के कष्ट सहने पड़ते हैं। अंततः एक दिन उसकी मृत्यु हो जाती है। जैनेंद्र कुमार ने कल्याणी के चरित्र को मनोवैज्ञानिक ढंग से समझाया है। स्त्री जीवन में प्रेम का बहुत महत्व है। जब कल्याणी को अपने पति से प्रेम नहीं मिलता, तो वह दूसरे पुरुषों में प्रेम ढूँढ़ने की कोशिश करती है। लेकिन निराश होकर जीवन में उसकी रुचि खत्म हो जाती है। वह खुद को इसके लिए ज़िम्मेदार मानती है।

कल्याणी मानसिक कलह, तनाव और निराधार भ्रम का शिकार हो जाती है। ये सब 'न्यूरोसिस' नामक रोग के लक्षण हैं। कल्याणी मृत्यु के प्रति संवेदनशीलता से भी ग्रस्त है। मृत्यु की छवि उसके मन में हमेशा बनी रहती है। फ्रायड द्वारा स्थापित थानाटोस की प्रवृत्ति कल्याणी के चरित्र पर पूरी तरह लागू होती है। वह अपने जीवन में न तो एक आदर्श पत्नी बन पाई और न ही एक आदर्श चिकित्सक।

जैनेन्द्र कुमार का पाँचवाँ उपन्यास 'सुखदा' (1953 ई.) है, जो आरंभ में धर्मयुग में धारावाहिक रूप में प्रकाशित हुआ था। इसका कथानक विविध घटनाओं के बोझ से दबा हुआ है। जैसा कि इस उपन्यास के शीर्षक से स्पष्ट है, इसकी मुख्य पात्र सुखदा है। उसका जीवन उसके लिए बोझ बन गया है। वह एक धनी परिवार की पुत्री है और विवाहित है। वैचारिक मतभेदों के कारण उसके पति के साथ उसके संबंध संतोषजनक नहीं हैं। उपन्यास की यह स्थिति स्पष्ट है, किन्तु इसके आधार पर कहानी का जो ताना–बाना बुना गया है, वह पाठक को अजीब लगता है। कहानी का उद्देश्य अंत तक अज्ञात रहता है। सुखदा के लाल के प्रति आकर्षित होने पर भी कथानक का तनाव समाप्त नहीं होता। कई असंगत प्रतिक्रियाओं और नाटकीय मोड़ों के बाद सुखदा अपने पति को छोड़कर अस्पताल में भर्ती हो जाती है। कहानी अनेक अनावश्यक, अप्रासंगिक विवरणों और चमत्कारी तत्वों से कमजोर हो जाती है।

यह उपन्यास भी वर्ष 1953 में प्रकाशित हुआ था। यह जैनेंद्र के पहले के उपन्यासों की तरह स्त्री–पीड़ा पर केंद्रित उपन्यास नहीं है। इसके दो मुख्य पात्र हैं– जितेन और भुवनमोहिनी। दोनों एक–दूसरे से प्रेम करते हैं। दोनों विवाह करना चाहते हैं। इसमें एक सामाजिक, आर्थिक समस्या है। जितेन गरीब है और भुवनमोहिनी अमीर। दोनों का विवाह कैसे चलेगा, इसकी चिंता स्वाभाविक है। भुवनमोहिनी के पिता एक प्रतिष्ठित न्यायाधीश हैं। वे खुले विचारों वाले हैं। भुवनमोहिनी को अपनी इच्छानुसार किसी से भी विवाह करने में कोई आपत्ति नहीं है। उसकी शंकाओं का समाधान करने के लिए, वह जितेन को कार में बिठाकर विवाह का प्रस्ताव रखती है। यहाँ फिर से अमीरी–गरीबी का पेंच फँस जाता है और रिश्ता टूट जाता है। अब भुवनमोहिनी का विवाह एक सुखी, संतुष्ट परिवार में हो जाता है। यहाँ जितेन उलझन में पड़ जाता है कि भुवनमोहिनी सुखी क्यों रह रही है। वह उससे बदला लेना चाहता है।

यह जैनेंद्र कुमार का अंतिम उपन्यास है। यह वर्ष 1985 में प्रकाशित हुआ था। इसकी नायिका सरस्वती नाम की एक लड़की है। उसका विवाह तो हो जाता है, लेकिन उसके पति के साथ उसके संबंध तनावपूर्ण हो जाते हैं। वह उसे छोड़कर वेश्या बन जाती है। अब उसका नाम सरस्वती नहीं, बल्कि रंजना है। वह आम वेश्याओं की तरह अपना शरीर नहीं बेचती, बल्कि एक संस्था बनाती है। इस संस्था के माध्यम से वह पुरुषों के मन में ईर्ष्या, घृणा और बदले की आग जलाती रहती है और उसे बुझाने के लिए स्नेह, ममता और प्रेम देती है। जैनेंद्र को लगता है कि अपने आत्मीय व्यवहार और सहज स्नेह से वह पुरुषों का दर्द दूर कर सकती है।

### निष्कर्ष

सुनीता में, जैनेंद्र कुमार ने चरित्र–विकास की तुलना में कथानक पर अधिक ध्यान केंद्रित किया। जैसा कि थियो डैमस्टीग्ट कहते हैं:

इनमें से अधिकांश कहानियों में कथावाचक स्पष्ट रूप से उपस्थित है, और क्रिया, कथानक और चरमोत्कर्ष पर ज़ोर है जो

मनो–कथन वाली कहानियों में नहीं है, जबकि चरित्र–बद्ध केंद्रीकरण केवल बिखरे हुए, व्यक्तिगत अंशों में ही मिलता है।
लेकिन अपने अगले उपन्यास, त्यागपत्र में उन्होंने अपनी शैली बदल दी। उन्होंने कथानक और पात्रों पर उसके प्रभाव को कुशलता से एकीकृत किया। उपन्यास न्यायाधीश प्रदीप की एक प्रिय चाची की अत्यधिक संकुचित कथा में नैतिक निर्णय की अपेक्षित असंभवता और उलझन को दर्शाता है, जो घर छोड़कर एक निम्न–जाति के व्यक्ति के साथ रहने के कारण नैतिक और सामाजिक स्तर से नीचे गिर जाती है। जैनेंद्र कुमार की रचनाओं में, पात्रों की मनोवैज्ञानिक स्थिति को हमेशा महत्व दिया गया है। उन्होंने उस स्थिति को बड़ी कुशलता से चित्रित किया है। हिंदी उपन्यास लेखन में बाह्य जगत और उसके संघर्ष की प्रस्तुति से मनोविश्लेषण और चेतना की धारा की ओर एक बदलाव देखा गया, जिसका नेतृत्व जैनेंद्र कुमार ने किया था। उनके पात्र सामाजिक मानदंडों के भीतर ढलने की कोशिश नहीं करते, बल्कि समाज के मौजूदा मानदंडों को चुनौती देते हैं। जैनेंद्र कुमार की रचनाओं की मुख्यतः महिला पात्र (जैसा कि हम पहले देख चुके हैं) ही ऐसी मौजूदा मानदंडों को चुनौती देती हैं।
जैनेंद्र कुमार ने अभूतपूर्व योगदान दिया है, फिर भी ऐसा लगता है कि हाल के दिनों में लोग उनके योगदान को भूल गए हैं। भारतीय समाज में विवाह जैसी संस्था को चुनौती देना अपने आप में एक क्रांति थी, जिसका नेतृत्व जैनेंद्र कुमार और उनकी रचनाओं ने किया।
यह स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है कि ये नायक विवाह की संस्था के माध्यम से किसी से बंधे होने के बावजूद अपनी स्वतंत्रता बनाए रखना चाहते हैं। जैनेंद्र की रचनाओं के माध्यम से जो अवधारणाएँ विकसित हुईं, उनकी कल्पना लगभग साठ–सत्तर साल पहले करना असंभव था। इसके अलावा, उस समय साहित्यिक कृतियों में ऐसी अवधारणाएँ दुर्लभ थीं।
जैनेन्द्र की रचनाएँ अक्सर अंत में हमें कोई स्पष्ट समाधान नहीं देतीं। पात्र प्रश्न उठाते हैं और उत्तर पाने की कोशिश करते हैं। लेकिन प्रेमचंद के विपरीत, जहाँ दर्शकों को अंत में सारे उत्तर मिल जाते हैं, जैनेन्द्र की रचनाओं में यह गुण नहीं है। अंततः, हम देखते हैं कि उनकी रचनाओं के नायकों को समाज के पारंपरिक विचारों और उसके स्वार्थ के आगे झुकना पड़ता है। लेकिन उनमें एक स्वतंत्र सोच का संतोष भी है, जो समाज को न बदल पाने के दुःख के साथ भी सामने आता है। आलोचकों का मानना है कि जैनेन्द्र अपने पात्रों को एक 'घटना' में मात्र भागीदार होने से ऊपर उठाकर हमें उनकी मनोवैज्ञानिक समझ और एक व्यक्ति के रूप में उनके अस्तित्व की यात्रा पर ले जाते हैं। यहाँ भुवनमोहिनी अंत तक जितेन पर भरोसा करती है और जैनेन्द्र कुमार की अन्य नायिकाओं की तरह उसे सभी सुख–सुविधाएँ देती रहती है।

**संदर्भ**


1. 'सुनीता' – प्रस्तावना – जैनेन्द्र कुमार, पृष्ठ – 8
2. 'परख' – जैनेन्द्र कुमार, पृष्ठ–44
3. 'इस्तीफा' – जैनेन्द्र कुमार, पृष्ठ– 25
4. 'नारी' (निबंध–संग्रह) – जैनेन्द्र कुमार, पृष्ठ– 92
5. पूर्वोदय प्रकाशन, नई दिल्ली
6. 'भारतीय साहित्य के रचयिता जैनेन्द्र कुमार'–गोविन्द मिश्र, पृष्ठ–27
7. 'परख' (उपन्यास) – जैनेन्द्र कुमार प्रकाशन– भारतीय ज्ञानपीठ, लोधी रोड, नई दिल्ली 110003
8. 'सुनीता' (उपन्यास) – जैनेन्द्र कुमार, प्रकाशन– भारतीय ज्ञानपीठ, लोधी रोड, नई दिल्ली 110003
9. 'इस्तीफा' (उपन्यास) – जैनेन्द्र कुमार, प्रकाशन– भारतीय ज्ञानपीठ, लोधी रोड, नई दिल्ली–110003